खोज

वाई-फाई का आविष्कार

वाई-फाई (Wi-Fi) आज हमारी रोजमर्रा की जिंदगी का अहम हिस्सा है, लेकिन इसका आविष्कार एक ही व्यक्ति द्वारा नहीं, बल्कि कई वैज्ञानिकों के शोध और प्रयोगों के परिणामस्वरूप हुआ। सबसे पहले इसकी नींव 19 वीं सदी में पड़ी, जब जेम्स क्लर्क मैक्सवेल ने विद्युतचुंबकीय तरंगों का सिद्धांत दिया। बाद में हाइनरिख हर्ट्ज़ ने इन तरंगों को प्रयोग में सिद्ध किया। यही तरंगें आगे चलकर वायरलेस संचार का आधार बनीं। 20 वीं सदी में रेडियो और वायरलेस तकनीक का विकास

हुआ, लेकिन असली क्रांति 1990 के दशक में आई। ऑस्ट्रेलिया की संस्था CSIRO के वैज्ञानिकों की एक टीम ने वायरलेस डेटा ट्रांसमिशन की एक नई तकनीक विकसित की। इस टीम का नेतृत्व जॉन ओ' सुलिवन कर रहे थे। असल में यह टीम अंतरिक्ष में ब्लैक होल से आने वाले रेडियो सिग्नल्स को समझने पर काम कर रही थी। इसी दौरान उन्होंने एक ऐसी तकनीक विकसित की, जिससे रेडियो तरंगों के माध्यम से डेटा को साफ और तेजी से भेजा जा सकता था। यही तकनीक आगे चलकर Wi-Fi का आधार बनी।

इसके बाद 1997 में IEEE ने 802.11 नाम का पहला वायरलेस नेटवर्क मानक जारी किया। यही वह तकनीकी ढांचा है, जिस पर आज का Wi-Fi आधारित है। 'Wi-Fi' नाम खुद कोई तकनीकी शब्द नहीं है, बल्कि यह एक ब्रांड नाम है, जिसे Wi-Fi Alliance ने 1999 में अपनाया। इसका उद्देश्य वायरलेस नेटवर्किंग को आसान और लोकप्रिय बनाना था। आज Wi-Fi रेडियो तरंगों का उपयोग करके आपके मोबाइल, लैपटॉप और अन्य डिवाइस को इंटरनेट से जोड़ता है। इसमें एक राउटर होता है, जो इंटरनेट सिग्नल को वायरलेस रूप में फैलाता है, और आपके डिवाइस उस सिग्नल को पकड़कर डेटा भेजते और प्राप्त करते हैं। Wi-Fi किसी एक आविष्कार का परिणाम नहीं, बल्कि विज्ञान, अंतरिक्ष अनुसंधान और संचार तकनीक के लंबे विकास का नतीजा है, जिसने दुनिया को बिना तारों के जोड़ दिया।

वैज्ञानिक के बारे में

जॉन ओ सुलिवन का व्यक्तिगत जीवन उतना ही रोचक है, जितना उनका वैज्ञानिक योगदान। उनका जन्म 1946 में ब्रिस्बेन में हुआ था। बचपन से ही उन्हें विज्ञान और गणित में गहरी रुचि थी, जिसने आगे चलकर उनके करियर की दिशा तय की। उन्होंने अपनी उच्च शिक्षा यूनिवर्सिटी ऑफ सीडनी से प्राप्त की, जहां उन्होंने भौतिकी में अध्ययन किया। बाद में उन्होंने सैद्धांतिक भौतिकी में विशेषज्ञता हासिल की। निजी जीवन में वे काफी सरल, शांत और शोध में डूबे रहने वाले व्यक्ति माने जाते हैं।

वे प्रचार-प्रसार से दूर रहकर अपने काम पर ध्यान केंद्रित करना पसंद करते थे। उनका पारिवारिक जीवन भी संतुलित रहा है। वे विवाहित हैं और अपने परिवार के साथ साधारण जीवन जीते रहे हैं। अपने काम के अलावा उन्हें संगीत और पढ़ने का भी शौक रहा है, जो उनके व्यक्तित्व के एक संवेदनशील और रचनात्मक पक्ष को दर्शाता है।

मार्च में आकाश दर्शन

आकाश में चंद्रमा और तारों (या ग्रहों) को देखने का रोमांच कुछ ऐसा है, जो दिल को छू लेता है। यह सिर्फ देखना नहीं, बल्कि महसूस करना है, जैसे ब्रह्मांड खुद आपको बुला रहा हो और आप उसकी विशालता में खो जाना चाहें। खासकर जब चंद्रमा किसी चमकीले ग्रह के पास आता है, तो वह दृश्य रोमांटिक, रहस्यमयी और जादुई लगता है। अब चंद्र ग्रहण से आगे चलते हैं और इस रोमांच पर विस्तार से बात करते हैं कि मार्च, 2026 में आकाश में और क्या घटित होने वाला है।

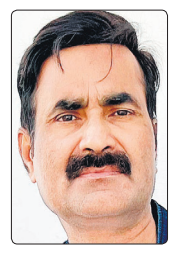

डॉ. इरफान ह्यूमन
विज्ञान लेखक

चंद्रमा और शुक्र का संयोजन

आज यानी 20 मार्च को चंद्रमा और शुक्र का संयोजन की घटना घटित होगी, जहां चंद्रमा शुक्र के उत्तर में लगभग 4 .4-4 .6 की दूरी पर होगा। समय यूटीसी में शाम, भारत में सूर्यास्त के समय (लगभग 18 :30-19 : 00 आईएसटी) दिखेगा। चंद्रमा सिर्फ 1-5 प्रतिशत प्रकाशित (बहुत पतला क्रिसेंट) होगा। शुक्र बहुत चमकीला-4 magnitude के आसपास) होगा, जो शाम का सबसे चमकीला तारा (संध्या तारा) के रूप में दिखाई देगा। यह पश्चिमी आकाश में निम्न क्षितिज पर होगा और चंद्रमा उसके ऊपर या पास दिखेगा। यह दृश्य सिर्फ 30-60 मिनट तक रहेगा, क्योंकि दोनों जल्दी अस्त हो जाएंगे। इस दृश्य को सूर्यास्त के ठीक बाद पश्चिम में देखा जा सकता है। इसे देखने के लिए किसी दूरबीन की जरूरत नहीं होगी। यह इस माह का सबसे आसान और चमकीला संयोजन होगा।

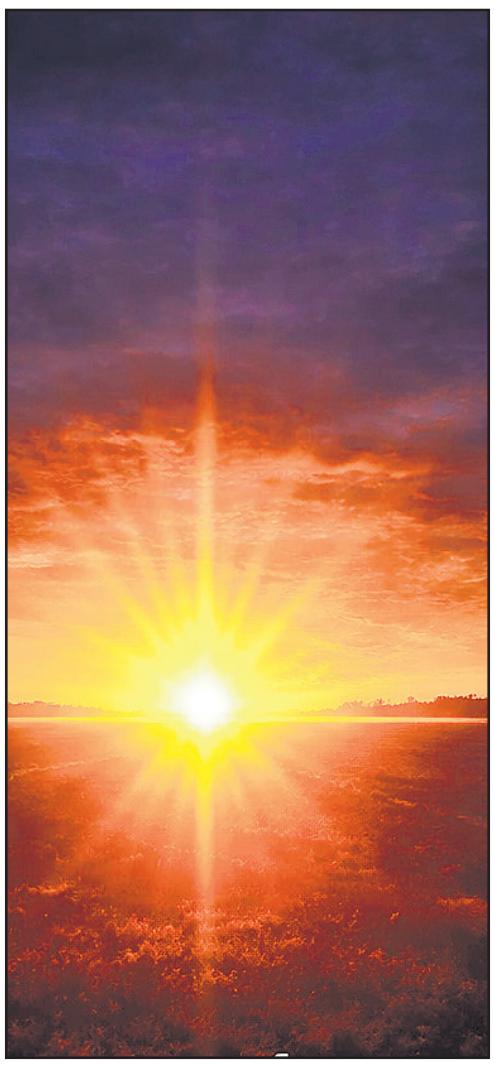

ठीक भूमध्य रेखा पर सूर्य

20 मार्च को मार्च विषुव की घटना घटित होगी। यह घटना 14:46 यूटीसी (कोऑर्डिनेटेड यूनिवर्सल टाइम) और 8:16 पीएम आईएसटी (इंडियन स्टैंडर्ड टाइम) पर होगी, तब सूर्य सीधे भूमध्य रेखा पर चमकता दिखाई देगा और दुनियाभर में दिन और रात लगभग बराबर होंगे। यह उत्तरी गोलार्ध में वसंत का पहला दिन भी होता है और दक्षिणी गोलार्ध में पतझड़ अर्थात शरद ऋतु विषुव का पहला दिन भी। अर्थात उत्तरी गोलार्ध में वसंत की शुरुआत और सर्दियों के अंत को चिह्नित करने के लिए मार्च विषुव को लिया जा सकता है, लेकिन दक्षिणी गोलार्ध में शरद ऋतु की शुरुआत और गर्मियों की समाप्ति को चिह्नित करता है।

यह हर साल 19, 20 या 21 मार्च के बीच पड़ता है। 2026 में यह ठीक 20 मार्च को है। एक सामान्य वर्ष के लिए गणना किए गए समय में कमी पिछले वर्ष की तुलना में 5 घंटे 49 मिनट बाद है और पिछले वर्ष की तुलना में लगभग 18 घंटे 11 मिनट पहले लीप वर्ष के लिए है। खगोल विज्ञान में, मार्च विषुव काल के नक्षत्र समय का शून्य बिंदु माना जाता है। विषुव ऐसा समय-बिंदु होता है, जिसमें दिवस और रात्रि लगभग बराबर होते हैं। इसका शब्दिक अर्थ होता है-समान।

किसी क्षेत्र में दिन और रात की लंबाई को प्रभावित करने वाले कई दूसरे कारक भी होते हैं। पृथ्वी अपनी धुरी पर साढ़े तेईस डिग्री झुके हुए सूर्य के चक्कर लगाती है, इस प्रकार वर्ष में एक बार पृथ्वी इस स्थिति में होती है, जब वह सूर्य की ओर झुकी रहती है और एक बार सूर्य से दूसरी ओर झुकी रहती है। इसी प्रकार वर्ष में दो बार ऐसी स्थिति भी आती है, जब पृथ्वी का झुकाव न सूर्य की ओर ही होता है और न ही सूर्य से दूसरी ओर, बल्कि बीच में होता है। इस स्थिति को विषुव या इक्विनॉक्स कहा जाता है। इन दोनों तिथियों पर दिन और रात की लंबाई लगभग बराबर होती है। यदि दो लोग भूमध्य रेखा से समान दूरी पर खड़े हों तो, उन्हें दिन और रात की लंबाई बराबर महसूस होगी। ग्रेगोरियन वर्ष के आरंभ होते समय (जनवरी माह में) सूरज दक्षिणी गोलार्ध में होता है और वहां से उत्तरी गोलार्ध को अग्रसर होता है। वर्ष के समाप्त होने (दिसंबर माह) तक सूरज उत्तरी गोलार्ध से होकर पुनः दक्षिणी गोलार्द्ध पहुंच जाता है। इस तरह से सूर्य वर्ष में दो बार भू-मध्य रेखा के ऊपर से गुजरता है।

चंद्रमा और बृहस्पति का संयोजन

26 मार्च को चंद्रमा और बृहस्पति के संयोजन की घटना घटित होगी, जहां चंद्रमा बृहस्पति के उत्तर में लगभग 3.5 की दूरी पर होगा। समय यूटीसी में दोपहर, भारत में रात के समय (शाम से मध्यरात्रि तक) दिखेगा। चंद्रमा 58 प्रतिशत प्रकाशित होगा। इसकी दृश्यता की बात करें, तो बृहस्पति का मैग्नीट्यूड -2.3 के आसपास बहुत चमकीला होगा। यह रात में दक्षिणी आकाश में ऊंचा दिखेगा। चंद्रमा बृहस्पति के पास होगा, जो एक शानदार जोड़ी बनेगी। दूरबीन या छोटे टेलीस्कोप से बृहस्पति के 4 गैलीलियन चंद्रमा भी दिख सकते हैं। इस घटना को शाम 7-8 बजे से रात भर दक्षिण या दक्षिण-पूर्व दिशा में देखें।

वैज्ञानिक फैक्ट

पृथ्वी पर ऑक्सीजन का उत्पादन और महासागर

क्या आपने कभी सोचा है कि ऑक्सीजन आखिर आती कहां से है? आमतौर पर हमारा ध्यान घने वर्षावनों, विशेषकर अमेजन जैसे क्षेत्रों की ओर जाता है, जिन्हें 'पृथ्वी के फेफड़े' कहा जाता है, लेकिन एक रोचक वैज्ञानिक तथ्य यह है कि पृथ्वी पर उपलब्ध ऑक्सीजन का एक बहुत बड़ा हिस्सा समुद्रों से आता है। वैज्ञानिकों और समुद्री अनुसंधानों के अनुसार, वैश्विक स्तर पर उत्पादित ऑक्सीजन का लगभग 50 से 60 प्रतिशत भाग महासागरों में रहने वाले सूक्ष्म जीवों द्वारा निर्मित होता है। समुद्रों में पाए जाने वाले फाइटोप्लवक, सूक्ष्म शैवाल और सायनोबैक्टीरिया जैसे जीव प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया के माध्यम से कार्बन डाइऑक्साइड और सूर्य के प्रकाश का

उपयोग कर ऑक्सीजन का उत्पादन करते हैं। ये जीव आकार में अत्यंत सूक्ष्म होते हैं, लेकिन संख्या में इतने विशाल होते हैं कि उनका सामूहिक योगदान पूरे ग्रह के वायुमंडलीय संतुलन को बनाए रखने में निर्णायक भूमिका निभाता है। विशेष रूप से 'प्रोक्लोरोकोकस' नामक सूक्ष्म जीव को पृथ्वी का सबसे अधिक मात्रा में ऑक्सीजन उत्पन्न करने वाला जीव माना जाता है। यह अकेला ही वैश्विक ऑक्सीजन उत्पादन में महत्वपूर्ण योगदान देता है। इसके अतिरिक्त, समुद्री शैवाल की बड़ी प्रजातियां, जैसे केल्प, भी तटीय क्षेत्रों में ऑक्सीजन उत्पादन और कार्बन अवशोषण में अहम भूमिका निभाती हैं। महासागर केवल ऑक्सीजन ही नहीं बनाते, बल्कि वे पृथ्वी के जलवायु तंत्र को भी नियंत्रित करते हैं। ये समुद्री जीव कार्बन डाइऑक्साइड को अवशोषित कर उसे जैविक पदार्थ में परिवर्तित करते हैं, जिससे ग्रीनहाउस गैसों का प्रभाव कम होता है। इसे 'ब्लू कार्बन' प्रक्रिया कहा जाता है, जो जलवायु परिवर्तन को नियंत्रित करने में महत्वपूर्ण मानी जाती है। हालांकि यह संतुलन अब खतरे में है। समुद्री प्रदूषण, जलवायु परिवर्तन, महासागरों का तापमान बढ़ना और अम्लीकरण इन सूक्ष्म जीवों के अस्तित्व को प्रभावित कर रहे हैं। यदि फाइटोप्लवक की संख्या में कमी आती है, तो इसका सीधा प्रभाव वैश्विक ऑक्सीजन उत्पादन और जलवायु संतुलन पर पड़ेगा। इसलिए यह समझना आवश्यक है कि ऑक्सीजन केवल जंगलों से ही नहीं, बल्कि महासागरों की गहराइयों में बसे सूक्ष्म जीवन से भी आती है। यह ज्ञान हमें पर्यावरण संरक्षण की व्यापक दृष्टि अपनाने के लिए प्रेरित करता है, जिसमें समुद्रों की सुरक्षा भी उतनी ही महत्वपूर्ण है जितनी वनों की।

पारिस्थितिकी के विघटन की चेतावनी लुप्त होती गौरैया

भारतीय जनजीवन में प्रकृति और जीव-जंतुओं के साथ सह-अस्तित्व की परंपरा अत्यंत प्राचीन रही है। इसी परंपरा की एक सहज अभिव्यक्ति है गौरैया, जो केवल एक पक्षी नहीं, बल्कि मानव सभ्यता के साथ विकसित हुई सांस्कृतिक स्मृति भी है। ग्राम्य जीवन में मिट्टी के घर, खपरैल की छतें, खुले आंगन और वृक्षों से युक्त वातावरण गौरैया के लिए आदर्श आवास प्रदान करते थे। उस समय मानव और प्रकृति के बीच कोई कृत्रिम दूरी नहीं थी, इसलिए गौरैया हर घर का हिस्सा बनकर रहती थी और उसकी चहचहाहट जीवन की सरलता का प्रतीक मानी जाती थी। समय के साथ औद्योगिक विकास और शहरीकरण ने इस संतुलन को प्रभावित किया। आधुनिक निर्माण पद्धतियों, रासायनिक कृषि और कृत्रिम जीवनशैली के कारण गौरैया का प्राकृतिक आवास और भोजन स्रोत दोनों ही प्रभावित हुए हैं। परिणामस्वरूप, जो पक्षी कभी सर्वत्र दिखाई देता था, वह आज अनेक क्षेत्रों में दुर्लभ हो गया है।

वैज्ञानिक दृष्टि से गौरैया का महत्व अत्यंत व्यापक है। यह एक कीटभक्षी पक्षी है, जो विशेष रूप से अपने बच्चों के पालन-पोषण के समय कीटों का सेवन करती है। कीट प्रोटीन से भरपूर होते हैं, जो बच्चों के शारीरिक विकास के लिए आवश्यक होते हैं। किंतु रासायनिक कीटनाशकों के अत्यधिक उपयोग ने कीटों की संख्या को गंभीर रूप से कम कर दिया है। इससे गौरैया के बच्चों के पोषण पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है और उनकी मृत्यु दर बढ़ जाती है। रासायनिक खादों का प्रभाव भी इस संकट को बढ़ाता है। इनके निरंतर उपयोग से मृदा की गुणवत्ता और उसमें रहने वाले सूक्ष्म जीव प्रभावित होते हैं, जो खाद्य श्रृंखला की आधारशिला हैं। जब यह आधार कमजोर होता है, तो उसका प्रभाव पूरे पारिस्थितिकी तंत्र पर पड़ता है। इसके साथ ही रासायनिक अवशेष गौरैया के शरीर में पहुंचकर उसकी प्रजनन क्षमता और जीवनकाल को भी प्रभावित करते हैं।

डॉ. जितेंद्र शुक्ला
वन्य जीव विशेषज्ञ

सामाजिक परिवर्तन भी इस संकट के लिए उत्तरदायी हैं। पहले लोग अपने घरों में दाना-पानी रखते थे और पक्षियों के लिए स्थान छोड़ते थे। आज की जीवनशैली में यह परंपरा लगभग समाप्त हो गई है। इसके अतिरिक्त जल स्रोतों की कमी और शहरी क्षेत्रों में बढ़ती स्वच्छता की प्रवृत्ति ने भी गौरैया के लिए उपलब्ध संसाधनों को सीमित कर दिया है। यह सभी परिवर्तन मिलकर उसके अस्तित्व को चुनौती देते हैं। पारिस्थितिकी तंत्र में गौरैया का महत्व अत्यंत व्यापक है। यह केवल कीट नियंत्रण तक सीमित नहीं है, बल्कि यह ऊर्जा प्रवाह और पोषण चक्र का भी एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। यह बीजों के प्रसार में सहायक होती है और पौधों की विविधता बनाए रखने में योगदान देती है। इसके अतिरिक्त यह स्वयं भी अन्य जीवों के लिए भोजन का स्रोत बनती है। इस प्रकार यह खाद्य जाल की एक महत्वपूर्ण कड़ी है। जब यह कड़ी कमजोर होती है, तो पूरे तंत्र पर उसका प्रभाव पड़ता है। यही कारण है कि गौरैया को जैव संकेतक के रूप में भी देखा जाता है। इसकी संख्या में गिरावट यह संकेत देती है कि पर्यावरण में ऐसे परिवर्तन हो रहे हैं, जो अन्य जीवों के लिए भी हानिकारक हो सकते हैं।

यदि हम इस संकट को केवल एक पक्षी की समस्या मानकर अनदेखा करते हैं, तो यह हमारी सबसे बड़ी भूल होगी। गौरैया का लुप्त होना उस व्यापक पर्यावरणीय संकट का प्रारंभिक संकेत है, जो भविष्य में और भी गंभीर रूप ले सकता है। यह हमें चेतावनी देता है कि हमारा विकास प्रकृति के अनुकूल नहीं है और यदि हमने समय रहते इसमें सुधार नहीं किया, तो इसका परिणाम अत्यंत गंभीर हो सकता है। इस स्थिति को सुधारने के लिए आवश्यक है कि हम अपने विकास के मॉडल पर पुनर्विचार करें। हमें रासायनिक कीटनाशकों और खादों के उपयोग को सीमित करना होगा और जैविक उपायों को अपनाना होगा। शहरी क्षेत्रों में हरित स्थानों का संरक्षण और विस्तार आवश्यक है। घरों और भवनों में ऐसे स्थानों की व्यवस्था की जा सकती है, जहां गौरैया घोंसला बना सके। इसके साथ ही लोगों में जागरूकता बढ़ाना भी आवश्यक है ताकि वे अपने आसपास के पर्यावरण के प्रति संवेदनशील बन सकें।

गौरैया का संकट हमें यह सिखाता है कि प्रकृति के साथ संतुलन बनाए रखना ही हमारे अस्तित्व की कुंजी है। यह केवल एक पक्षी की रक्षा का प्रश्न नहीं है, बल्कि उस पारिस्थितिक संतुलन की रक्षा का प्रश्न है, जिस पर समस्त जीवन निर्भर करता है। यदि हम इस चेतावनी को समय रहते समझ लें और अपने व्यवहार में परिवर्तन करें, तो संभव है कि आने वाली पीढ़ियां भी उस मधुर चहचहाहट को सुन सकें, जो हमारे जीवन का अभिन्न हिस्सा हुआ करती है।

मरीन लाइफ

जब नर समुद्री घोड़ा देता है जन्म

समुद्री जीवों की दुनिया में एक अद्भुत अपवाद के रूप में नर समुद्री घोड़े ही गर्भ धारण करते हैं। दरअसल समुद्री घोड़ा की शारीरिक संरचना में एक विशेष थैली होती है, जो उसके पेट के हिस्से में विकसित होती है। प्रजनन के दौरान मादा अपने अंडों को नर की इस थैली में स्थानांतरित कर देती है। इसके बाद निषेचन की प्रक्रिया नर के शरीर के भीतर ही होती है, जो इसे अन्य अधिकांश जीवों से अलग बनाती है। नर समुद्री घोड़ा इस थैली में अंडों को केवल सुरक्षित ही नहीं रखता, बल्कि उन्हें पोषण और ऑक्सीजन भी प्रदान करता है। यह थैली किसी हद तक स्तनधारियों के गर्भाशय की तरह कार्य करती है, जहां भ्रूण का विकास नियंत्रित वातावरण में होता है। प्रजाति के अनुसार 10 से 25 दिनों तक गर्भधारण की अवधि पूरी होने के बाद नर समुद्री घोड़ा संकुचन के माध्यम से सैकड़ों से लेकर लगभग 2,000 तक शिशुओं को जन्म देता है। यह प्रक्रिया देखने में किसी छोटे 'प्राकृतिक प्रसव' जैसी प्रतीत होती है।

समुद्री घोड़ों की एक और रोचक विशेषता उनका एकनिष्ठ व्यवहार है। कई प्रजातियों में नर और मादा लंबे समय तक एक ही जोड़ी के रूप में रहते हैं और रोजाना 'डांस' जैसे व्यवहार के माध्यम से अपने संबंध को मजबूत करते हैं। यह समन्वय प्रजनन प्रक्रिया को सफल बनाने में सहायक होता है। इसके अतिरिक्त, समुद्री घोड़े उत्कृष्ट छलावरण क्षमता रखते हैं। वे अपने आसपास के वातावरण के अनुसार रंग बदल सकते हैं और समुद्री घास या प्रवाल के बीच आसानी से छिप जाते हैं, जिससे वे शिकारियों से बच पाते हैं। उनकी पूंछ लचीली होती है, जिससे वे समुद्री पौधों को पकड़कर स्थिर रह सकते हैं, क्योंकि वे अन्य मछलियों की तरह तेजी से तैर नहीं पाते। हालांकि इन अद्भुत जीवों का अस्तित्व आज कई खतरों से घिरा है। समुद्री प्रदूषण, तटीय आवासों का विनाश, जलवायु परिवर्तन और अवैध व्यापार (विशेषकर पारंपरिक दवाओं और सजावटी वस्तुओं के लिए) इनके लिए गंभीर चुनौती बन चुके हैं। इसलिए समुद्री घोड़ों का संरक्षण केवल जैव विविधता की रक्षा नहीं, बल्कि समुद्री पारिस्थितिकी तंत्र के संतुलन को बनाए रखने के लिए भी आवश्यक है।